

ज्ञानामृत

(यत् पीत्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्)

रेडियो भेंट वार्ता का मौलिक रूप

सद्‌गुरु महाराज के
पुनीत महासमाधि दिवस पर
समर्पित अनुपम भेंट
त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये

ईश्वर आश्रम ट्रस्ट
इशबर (निशात), श्रीनगर, कश्मीर



ज्ञानामृत

(यत् पीत्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्)

रेडियो भेंट वार्ता का मौलिक रूप

सद्गुरु महाराज के
पुनीत महासमाधि दिवस पर
समर्पित अनुपम भेंट
त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये

ईश्वर आश्रम ट्रस्ट
इशबर (निशात), श्रीनगर, कश्मीर

प्रकाशक
ईश्वर आश्रम ट्रस्ट
इशबर (निशात), श्रीनगर (कश्मीर)

जम्मू आश्रम
2-महेन्द्र नगर
कनाल रोड, जम्मू (तवी) 180 016

दिल्ली आश्रम
आर-5, पॉकेट-डी,
सरिता विहार, नई दिल्ली - 110076

प्रथम संस्करण - 1000 प्रतियां
सितम्बर, ई० सन् 2010
मूल्य - रुपये 30

मुद्रक : मेहरचन्द लछमनदास पब्लिकेशंस
4225-ए, 1 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली - 110 002

ज्ञानामृत के विषय में

***

ईश्वरस्वरूप स्वामीजी महाराज की उन्नीसवीं महासमाधि-तिथि पर, समस्त भक्त जनता को एक अनुपम भेंट समर्पित करते हुए ईश्वर आश्रम ट्रस्ट अपार हर्ष का अनुभव कर रहा है। यह वह अक्षयनिधि है जिसका बार-बार उपयोग करने पर भी अपचय न होकर सतत उपचय ही होगा। स्वात्मसाक्षात्कार का साधक बनने के रूप में यह गागर में सागर है। कश्मीर शैवदर्शन की प्रमुख धाराओं का इसमें जो प्रवाह है वह त्रिवेणी संगम सा अपवर्ग साधक है। जनसाधरण इस ज्ञानामृत का पान करने से अवश्य ही लाभान्वित होगा ऐसी दृढ़ धारणा है।

रेडियो श्रीनगर कश्मीर केन्द्र के हम आभारी हैं कि बहुत परिश्रम करके उन्होंने हमें रिकार्डिंग संग्रहालय से वार्ता को उपलब्ध कराके हमारी चिरकालिक साध पूर्ण की। हम उन्हें पुनः धन्यवाद देना अपना कर्तव्य समझते हैं।

हर्ष का विषय है कि ट्रस्ट के अधिकारी इस भेंट वार्ता का मौलिक C.D. भी शीघ्र ही सुलभ कराके भक्तजनता का उपकार करेंगे।

सचिव

ईश्वर-आश्रम ट्रस्ट।

ज्ञानामृत

(यत् पीत्वा मोक्ष्यसेऽशुमात्)

सद्गुरु के मुखारविन्द से शैवदर्शन की बारीकियों को समझने के लिए तथा जनसाधारण तक इसके प्रचार प्रसार के लिए ई० सन् 1972 में ईश्वरस्वरूप स्वामी लक्ष्मणजू महाराज के साथ उनके आश्रम ईशबर निशात श्रीनगर में रेडियो कश्मीर श्रीनगर ने एक वार्तालाप का आयोजन किया था। प्रायोजक उस समय के केन्द्र के निर्देशक श्री के० के० नैयर थे और उन्होंने अपने साथ शैवदर्शन के प्रकाण्ड पण्डित स्वा० (प्रो०) नीलकण्ठ गुरुटू तथा प्रो० मखनलाल कुकिलू को विषयज्ञाता के तौर पर सह सहायक के रूप में लाया था।

पुस्तक में संकेतित नाम –
के० के० नैयर = के० के० नै०
प्रो० नीलकण्ठ गुरुटू = नी० क० गु०
प्रो० मखनलाल कुकिलू = म० ला० कु०

***

के० के० नै० : हम सुनते हैं कि स्वामी रामजी जन्म से ही सिद्ध थे, यह मैंने कहीं पढ़ा है। तो क्या यह बात आप के बारे में भी कही जा सकती है।

स्वामीजी : कौन, हमारे परम गुरु ?

के० के० नै० : जी। तो आप के बारे में भी यह बात कही जा सकती है या नहीं?

स्वामीजी : यह तो मैं नहीं कर सकता हूँ कि मैं जन्म से सिद्ध हूँ या सिद्ध हो गया हूँ। या सिद्ध बनने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

के० के० नै० : तो फिर हम इस तरह से इस बात को लें कि जिस मंज़िल पर अब आप पहुंचे हैं वह कब आप ने शुरू की? इस रास्ते पर कब आप ने पांव रखा?

स्वामीजी : मैं छः साल का था जब मैं इस रास्ते पर चला और मैंने अपने भाई [श्री महेश्वरनाथ रैना] से यह दीक्षा ली थी। तत्पश्चात् वही मुझे स्वामीरामजी के पास ले गये और वहां मुझे उनका अनुग्रह प्राप्त हो गया।

के० के० नै० : तो छः बरस के जब आप थे तो आप को कैसा लगा कि इस रास्ते पर चलना चाहिये। छः बरस की उमर तो बड़ी कम होती है।

स्वामीजी : मुझे पता नहीं कि मुझे कैसे इस में लगाव हो गया। शायद पूर्वजन्म के संस्कार थे। मुझे और यह भी मैं नहीं कह सकता हूँ कि मुझे उन दिनों में क्या-क्या अनुभव हुआ था क्योंकि "I was absolutely unconscious" बालक था।

के० के० नै० : तो जब आप संस्कार की बात करते हैं फिर तो बचपन कोई ज़्यादा अहम चीज़ नहीं है, वे संस्कार बड़े अहम

हैं जिन्होंने आप को इस रास्ते पर लगाया।

स्वामीजी : हाँ संस्कार ही हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण कहते हैं :-

"अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।।"

अर्थात् अनेक जन्मों में सिद्ध होकर साधक फिर मोक्षधाम को प्राप्त करता है। एक जन्म की बात नहीं है। अनेक जन्मों में यह काम करना पड़ता है। यह सफर तो बहुत लम्बा है।

के० के० नै० : ये तो संस्कार हैं?

स्वामीजी : हाँ, संस्कार ही ले जाते हैं एक जन्म से दूसरे जन्म में, दूसरे जन्म से तीसरे जन्म में। वे संस्कार ही push करते हैं आगे आगे।

के० के० नै० : इनका रिश्ता आत्मा से होता है क्या?

स्वामीजी : इनका रिश्ता आत्मा से होता है।

के० के० नै० : शरीर से नहीं?

स्वामीजी : नहीं शरीर से कहाँ, पुर्यष्टक से होता है। अर्थात् – पांच तन्मात्र, मन, बुद्धि और अहंकार से होता है।

के० के० नै० : जी?

स्वामीजी : मन, बुद्धि, अहंकार और पाँच ज्ञानेन्द्रिय, ये आठ जीव के साथ-साथ रहते हैं और यही इसको push करते हैं, पूरे संस्कार को।

के० के० नै० : उसके बाद क्या हुआ, जब आप ने दीक्षा ली?

स्वामीजी : बस इसी में चला गया। फिर संसार की ओर मेरा कुछ लगाव रहा नहीं।

के० के० नै० : जब आप इस रास्ते पर आये, आप ने दीक्षा ली, इसी को अपना लिया। बाकी चीज़ों को छोड़ दिया। फिर क्या क्या?

स्वामीजी : मुझे आनन्द आ गया, ज्यादा ही, इसमें। अधिक मात्रा में आनन्द आ गया।

के० कै० नै० : सुबह शाम आप क्या करते थे?

स्वामीजी : बस बैठता था इसी में। सुबह शाम ही नहीं, दिन में भी इसी में रहता था। खास कर भोजन करने के समय भी इसी में रहता था।

के० के० नै० : एक बात और मैं आप से पूछना चाहूंगा कि यह जो शैवधर्म है कश्मीर का, इसमें एक ही ईश्वर को मानते हैं?

स्वामीजी : यह अद्वैतवाद है।

के० के० नै० : जी। तो जब सचाई एक है तो सचाई का रूप भी एक होना चाहिये। सचाई के इतने रूप पूरे संसार में लोगों को मिलते हैं, अलग-अलग धर्मों में, अलग-अलग मतों में, तो अगर समझाने के लिये कोई scientist से कहे, तो वह कहते हैं कि उजाले का रंग एक है लेकिन spectrum में से निकलता है तो रोशनी के कई रंग हो जाते हैं, लेकिन जो पहुंचे हुए लोग हैं, जो जानक़ार लोग हैं, जिन्होंने उस उजाले का शुद्ध रूप देखा है, तो वह एक ही रूप बखान करेंगे?

स्वामीजी : एक ही रूप है वह। एक ही रूप, निर्णय करने वालों ने ही इसको बिगाड़ दिया है। यह अद्वैत रूप है, लेकिन निर्णय करने वाले कुछ और ही ढंग से निर्णय करने लगे हैं। They are responsible for this पर Shaivism में यह बात नहीं

है। Shaivism ने साफ़-साफ़ बताया है कि यह अद्वैत मार्ग वस्तुतः क्या है? दरअसल अद्वैत मार्ग जो है वह मार्ग सबों के लिये है। यह कोई खास religion नहीं है कि ब्राह्मण ही इसको सीख सकता है और कोई नहीं। Actually it is meant for every body. कोई भी हो, जो संसार में पैदा हो गया है, उसके लिये यह अद्वैत मार्ग है। Because it is information from God, who has created everybody, who has created all castes.

के० के० नै० : तो इसका मतलब है कि बताने वालों ने

स्वामीजी : बताने वालों ने ही इसमें ज़रा गड़बड़ किया है।

के० के० नै० : आप यह कहना चाहेंगे कि वह लोग जिन्होंने उजाले का शुद्ध रूप देखा है उन्होंने इस में कहानियां जोड़ी हैं, क्योंकि एक होता है eye-witness account और एक होता है fiction. तो इस में fiction आ गई?

स्वामीजी : हाँ fiction आ गई और वह कहानियां जो हैं वहीं इसमें add की की गई हैं तो यह गड़बड़ हुई।

के० के० नै० : मैंने यह भी पढ़ा है कि ईश्वर को बयान नहीं किया जा सकता। तो अगर बयान नहीं किया जा सकता, लोग जिन्होंने ईश्वर का नाम सुना है पर उसको अच्छी तरह महसूस नहीं किया तो इनको कैसें समझायें?

स्वामीजी : दीक्षा से। गुरु जो होता है, जो सिद्धगुरु होता है वह दीक्षा से ही इसको समझा सकता है। Words से नहीं। एक पुस्तक बनी है, उसका नाम है *"zen bones zen flesh"* उस में लिखा है कि किताबों से आत्मा का flesh आयेगा और

bones आयेंगी, वही वर्णन हो जायेंगी, not the marrow. Marrow can be experienced in silence. वह किताबों का विषय नहीं है। पुस्तकों का विषय नहीं है यह। यह विषय experience का है। अनुभव का है। अनुभव से ही समझा सकता है गुरु शिष्य को। तो फिर वह केवल शास्त्रवित् [शास्त्र जानने वाला] ही होगा। वेद की एक कथा है कि नारदऋषि सनतकुमार के पास सीखने के लिये आये थे। सनतकुमार ने उससे पूछा पहले मुझे बताओ कि तुमने क्या-क्या पढ़ा है? नारदऋषि ने सब शास्त्रों का नाम ले लिया और कहा :–

"यत्किञ्चित् पृथिव्यां तत् मयाधीतम्।"

"जो कुछ संसार में पुस्तकें हैं, वह मैंने पढ़ी हैं"। फिर सनतकुमार ने जवाब ने दिया :

"शब्दवित्त् एवासि नार्थवित्।"

"शब्दों को तुम ने सीखा है अर्थ नहीं समझा है। फिर पढ़ना होगा"।

इसलिये यह अनुभव की बात है यह शब्दों में नहीं आने वाली चीज़ है।

के० के० नै० : लेकिन दीक्षा की जहाँ तक बात है, स्वामी जी, अपने देश में तो ६७, ६८ करोड़ लोग हैं। कितने लोग दीक्षा लेंगे। हक तो उनका भी है कि ईश्वर को वह भी जानें?

स्वामीजी : सबों को हक है यह।

के० के० नै० : तो वह कहाँ जायें?

स्वामीजी : अनुभवी गुरु के पास और किस के पास।

के० के० नै० : तो वह पहचान भी तो आसान नहीं है। आजकल तो आप पूरे देश में देखिये, आप समाचार पत्रों को देखिये। रिसालों को देखिये, बहुत गुरु हैं, लेकिन सभी वैसे होंगे जैसे आप कह रहे हैं, तो यह कहना तो बड़ा मुश्किल है?

स्वामीजी : इसमें भगवान् के अनुग्रह की भी आवश्यकता है। भगवान् का अनुग्रह हो जाये तो सद्गुरु मिल जाये।

म० ला० कु० : स्वामीजी, सात आचार जो हैं, सात आचारों में त्रिकाचार ही क्यों लोगों में प्रसिद्ध है?

स्वामीजी : सात आचार जो हैं - शैव, वाम, दक्षिण, कौल, मत, त्रिक आदि? यह भिन्न-भिन्न आचार नहीं हैं, यह एक ही प्रणाली है। These are steps to go and reach to the point of त्रिक। यह कोई भिन्न-भिन्न आचार नहीं हैं। त्रिक जो है, This is three-fold science. इसमें अद्वैत, द्वैताद्वैत और द्वैत - तीनों आ गये हैं। This is the cycle of Objective-Consciousness, Cognitive-Consciousness and Subjective Consciousness. नरशक्तिशिवात्मकं त्रिकं नर, शक्ति और शिव इसके नामान्तर हैं। इसीलिये यह शास्त्र त्रिकशास्त्र कहलाता है। इस में तीन शाखायें हैं - द्वैत शाखा; अद्वैत शाखा है और द्वैताद्वैत शाखा है।

द्वैत शाखा में दस तन्त्रों का अन्तर्भाव है, द्वैताद्वैत शास्त्र में अठारह तन्त्रों का अन्तर्भाव है, और अद्वैत शास्त्र में चौंसठ तन्त्रों का अन्तर्भाव है।

परन्तु अद्वैत शास्त्र ही त्रिकशास्त्र क्यों कहलाता है, क्योंकि अद्वैत शास्त्र में द्वैत शास्त्र का भी अन्तर्भाव है, द्वैताद्वैत शास्त्र

का भी अन्तर्भाव है और अद्वैत शास्त्र का भी अन्तर्भाव है। इस तरह से अद्वैत शास्त्र में सारे ९२ तन्त्रों का अन्तर्भाव है। इसी लिये अद्वैत शास्त्र, या भैरव शास्त्र को ही त्रिक शास्त्र कहते हैं।

जो अद्वैत प्रक्रिया है [Shaivism] त्रिक शास्त्र, उसमें द्वैत भी है, द्वैताद्वैत भी है और अद्वैत भी है। तीनों आ गये हैं उसमें। इसलिये इसको त्रिक शास्त्र कहते हैं।

नी० क० गु० : तन्त्र और त्रिक का आपस में क्या सम्बन्ध है, क्या तन्त्र को ही त्रिक कहते हैं या त्रिक कोई अलग चीज़ है?

स्वामीजी : नहीं। भैरव तन्त्रों को त्रिक कहते हैं। तन्त्र तीन sections में विभक्त हुये हैं। तन्त्र जो है वह द्वैत तन्त्र हैं जिन को शिवतन्त्र कहते हैं और दूसरे हैं रुद्रतन्त्र या द्वैताद्वैत तन्त्र। अद्वैत तन्त्र भैरव तन्त्र कहलाये जाते हैं। भैरव तन्त्रों में इन समस्त अन्य तन्त्रों का भी समावेश हुआ है। इसी लिये भैरव तन्त्र को ही 'त्रिक' कहते हैं।

नी० क० गु० : भैरव तन्त्र को हम त्रिक कहते हैं तो फिर क्या हम इसको कश्मीर शैवदर्शन जो कहते हैं क्या यह नाम ठीक है या त्रिक कहना ही ठीक होगा।

स्वामीजी : नहीं, शैव शास्त्र और त्रिक शास्त्र में कोई भेद नहीं है।

नी० क० गु० : कोई भेद नहीं है?

स्वामीजी : कोई भेद नहीं है क्योंकि शिव मानिये, रुद्र मानिये या भैरव मानिये, एक ही नाम है।

द्वैत रूपता से अगर इसके नाम लेंगे तो शिव होगा,
द्वैताद्वैत रूप से इसका नाम लेंगे तो रुद्र कहा जायेगा,
अद्वैत रूप से इसका नाम लेंगे तो भैरव होगा।

यह शिव शास्त्र ही त्रिक शास्त्र है और यह त्रिक शास्त्र क्यों कश्मीर शैवशास्त्र माना गया है।

इसको Kashmir Shaivism कहते हैं ना हम?

नी० की० गु० : हाँ, वही तो है।

स्वामीजी : तत्त्वदृष्टि से जब कलियुग के आने पर त्रिक शास्त्र का संपूर्ण रूप से लोप हुवा था। फिर कैलास पर्वत पर भगवान् शङ्कर ने श्रीकण्ठ का अवतार धारण किया और भगवान् दुर्वासा ऋषि को आमन्त्रण कर के आदेश दिया कि इन तन्त्रों को (इस त्रिक शास्त्र का) फिर से प्रचार करो। उन्होंने (ऋषि दुर्वासा ने) तीन मानसिक पुत्र उत्पन्न किये, जिनमें एक द्वैतशास्त्र के संप्रदाय का, एक द्वैताद्वैत शास्त्र के संप्रदाय का और एक अद्वैत शास्त्र के संप्रदाय का था। He created those three sons with the force of mind – संकल्प से वे पैदा हो गये और उनमें अपने शास्त्रों का समावेश किया। त्रिकशास्त्र का समावेश त्र्यम्बकनाथ में हुवा; आमर्दक और श्रीनाथ, जो दो अन्य पुत्र थे, उन्हें क्रमशः द्वैत शास्त्र का और द्वैताद्वैत शास्त्र का समावेश हुआ। त्र्यम्बक शाखा के संप्रदाय में ही मानसिक पुत्रों की परंपरा चली आई बहुत समय तक। मानसिक पुत्र ही उत्पन्न करते रहते थे और उनमें ही संक्रमण करते थे, अपनी दीक्षा करते थे। वह वैसे ही हो जाते थे। "**दीपात्दीपं इवोदितम्**" जैसे एक चिराग से दूसरा चिराग बन जाता है, उसमें कोई कमी नहीं रहती है। गुरु और शिष्य एक जैसा रहता है। ऐसे ही यह सम्प्रदाय चला आया। फिर पंद्रहवीं पीढ़ी जो थी, उस से आगे एक सिद्ध हुवा है जिसका नाम संगमादित्य

था। उसने मानसिकपुत्र उत्पन्न करने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु सफल नहीं रहा। वह मानसिक पुत्र उत्पन्न नहीं कर सका। तो वह भ्रमण करते-करते कश्मीर देश में आ गया। कश्मीर देश में ही उसने एक कन्या को देखा और उसके पिता के पास जाकर उस कन्या के साथ विवाह किया। फिर कश्मीर में ही इसके संप्रदाय का प्रचार हो गया। इसीलिये तब से इसका नाम कश्मीर शैवदर्शन पड़ा। उधर से ललितादित्य के शासन काल में अन्तर्वेदी में अत्रिगुप्त थे। अन्तर्वेदी एक track of land है, जो यमुना और गङ्गा के मध्य में है। वहाँ अत्रिगुप्त आचार्य रहते थे। वह भी शैव शास्त्र के विद्वान् थे। वहाँ प्रचार नहीं हो सका। सौभाग्यवश ललितादित्य राजा, जो उन दिनों कश्मीर का शासन करते थे, वहां चले गये, उनका दर्शन करके, उनको यहाँ निमन्त्रित किया। उस रीति से भी फिर उनकी परम्परा से भी यहाँ कश्मीर शैवदर्शन स्थापित हो गया। इसलिये ऐसी-ऐसी बातों पर इस का काश्मीर शैवदर्शन नाम पड़ा।

के० के० नै० : स्वामीजी, यह परमशिव का क्या मतलब है?

स्वामीजी : शिव और परमशिव, इसका भेद समझना चाहते है आप?

के० के० नै० : शिव किस को कहते है और परमशिव किस को?

के० के० नै० : जी हाँ।

स्वामीजी : यह जो शिव है वह भी परमशिव जैसा ही है। शिव और परमशिव में वास्तविक भेद नहीं है। Shiv is concerned परमशिव उस से above है। यानि concerned भी है और

above भी है।

के० के० नै० : क्या परमशिव का मतलब है निर्गुण, निराकार, सर्वव्यापकसत्ता?

स्वामीजी : नहीं। इनके लक्षण निर्गुण, निराकार, सर्वव्यापक, यह बात नहीं है। इनका लक्षण है चित्, आनन्द, इच्छा, ज्ञान और क्रिया। सम्पूर्णता जहाँ आयेगी वह परमशिव है।

के० के० नै० : पर जो अव्यक्त सत्ता है, निर्गुण, निराकार वहाँ क्रिया करने की शक्ति तो होती है। बीज तो होता ही है वहाँ। अव्यक्त में व्यक्त होने की शक्ति तो होती ही है?

स्वामीजी : अव्यक्त में व्यक्त है।

"अन्तश्चित्तवतामेव घटते बहिरात्मना"

यह सारा जगत जो है वह अव्यक्त में ठहरा रहता है। महाप्रलय में भी यह अव्यक्त में ही ठहरा रहता है। यह कहीं नही चला गया है। यह संसार वहां मौजूद है। परन्तु

"मयूराण्डरसवत् अभिन्नरूपतया"

अर्थात् मोर के अण्डे में विद्यमान रस (plasma) की तरह जैसे भिन्न-भिन्न प्रकार के रंग उस रस में अन्तर्हित होते हैं अभिन्न रूप से, उसी प्रकार शिवरूपता से ही यह वहां ठहरा रहता है। और इसमें कभी अन्तरता आती है कभी ग्राह्यता कभी बाह्यता। कभी अन्तर्दशा में परमशिव रूपता, ग्राह्यता में शक्तिरूपता और बाह्यता में विश्वरूपता।

के० के० नै० : मुझे स्वामीजी ऐसा लगता है कि यहां बहुत सारे लोग यह गलत समझते हैं कि परमशिव जो है, यह शङ्कर

भगवान् का ही रूपान्तर है। तो क्या यह परमशिव जो है यह भगवान् कृष्ण भी बन सकते हैं, कुछ भी बन सकते है परमशिव। यह तो कुछ भी बन सकते हैं?

स्वामीजी : परमशिव can even be attributed to any human being.

के० के० नै० : है ना?

स्वामीजी : क्योंकि परमशिव से इतर (भिन्न) कोई भी नहीं है, यह सारा बाह्यवर्ग include हो गया है परमशिव में।

के० के० नै० : यह तो अनुभव की ही बात है। यह तो सिर्फ अनुभव से ही पता चलेगा?

स्वामीजी : नहीं शास्त्रों में भी कहा है :

"प्रदेशोऽपि ब्रह्मणः सार्वरूप्यं अविक्रांत अविकल्प्यश्च।"

एक एक तिनका भी परंब्रह्म की सर्वरूपता से बाहर नहीं। सर्वता को छोड़कर नहीं ठहर सकता। वह एक ही है। कृष्ण मानिये, शङ्कर मानिये, राम मानिये, शिव मानिये, रहीम मानिये, क्रायिस्ट् [Christ] मानिये, वह एक ही है। या मित प्रमाता मानिये, जीव मानिये, वह भी परमशिव ही है।

के० के० नै० : स्वामीजी, फिर ग्राह्यविश्व की सत्ता कहां जाती है? ग्राह्यविश्व इसमें अन्तर्भूत हो जाता है शिवभाव में या नहीं?

स्वामीजी : नहीं, शिवभाव की यह आन्तरता है, ग्राह्यता है, बाह्यता है। शिवभाव को ही जब अन्तर्दशा में ठहराता है, वहां आन्तरता है। अपने शिवभाव को ग्राह्यदशा में जब लाता है तो ग्राह्यरूपता से ठहरता है। और उसी शिवभाव को वह बाह्यरूपता में

जगत्रूपता में ठहराता है, वही शिव बन जाता है।

"आश्यानं चिद्रसस्यौघं साकारत्वमुपागतम्।

जगद्रूपतया वन्दे प्रत्यक्षं भैरवं वपुः।।" [अभिनवगुप्त।]

चिद्रस की आश्यानता ही जगतरूप बन गयी है। इसलिये प्रत्यक्षजगतरूप परमेश्वर को ही मैं प्रणाम करता हूँ। Why should I go to that अव्यक्त परमेश्वर।

के० के० नै० : आश्यानता से आप का भाव coagulation से है?

स्वामीजी : Coagulation – जमने का।

के० के० नै० : मैं आपको वापस ले चलता हूँ जो पहली बात आप बता रहे थे कि त्र्यम्बकादित्य के ज़माने से यह दुबारा शुरू हुआ, तो जो हमारे सुनने वाले नहीं जानते हैं, उन्हें यह बताना मैं ज़रूरी समझता हूँ कि यह कौन सी सदी में हुवा और संगमादित्य जो थे, उन्होंने इसको फिर से कैसे उठाया? कश्मीर में लाया, समय का संबन्ध है क्या इसके साथ?

स्वामीजी : प्रचार कलियुग के आद्य में हुवा है। कलियुग को तो हो गये हैं अब कोई ५००० वर्ष। मानिये संगमादित्य, जो कश्मीर में आया है।

संगमादित्य की दूसरी पीड़ी थी अरुणादित्य।

अरुणादित्य की दूसरी पीड़ी थी आनन्द।

आनन्द की दूसरी थी सोमानन्द।

सोमानन्द की दूसरी थी उत्पलदेव।

उत्पलदेव की दूसरी थी लक्ष्मणगुप्त।

लक्ष्मणगुप्त की अभिनवगुप्त।

अभिनवगुप्त के तो ९०० साल हो गये। इसी से आप calcula-

tion कर सकते है।

के० के० नै० : डॉ० बलजिन्नाथ पंडित ने अपनी पुस्तक "Aspects of Kashmir Shaivism" में लिखा है कि त्र्यम्बकादित्य का समय तीसरी सदी का अन्त, ईसा के बाद, और संगमादित्य का सातवीं सदी का अन्त, ईसा के बाद, तो उनको समझे कोई १६०० वर्ष हो गये या ज्यादा १७०० हो गये?

स्वामीजी : किन को?

के० के० नै० : त्र्यम्बकादित्य १७०० और संगमादित्य को हो गये कोई १३०० वर्ष?

स्वामीजी : नहीं, यह सम्भव नहीं है। देखिये त्र्यम्बकादित्य तो बहुत पुराने है। त्र्यम्बकादित्य तो आद्यगुरु हैं। वह तो कलियुग के आद्य में उसको तो कम-से-कम ५००० वर्ष तो हो गये हैं।

के० के० नै० : एक कृपा और कीजिये। जो हमारे सुनने वाले और मैं खुद भी उसमें शामिल हूँ, जो जानते नहीं हैं कि त्रिक क्या है। तो उनके लिये समझायें कि त्रिक क्या है।

स्वामीजी : त्रिक ही सारा कुछ है। त्रिक ने ही सारे को pervade कर लिया है।

This is three-fold.

हम भी Three-fold cycle में ही ठहरे हैं।

Everything is three-fold.

जो भी कुछ है, वह त्रिक है। वह तीन-तीन हैं।

एक वेद्य है, एक वेदन है, एक वेदक है।

जाग्रत है, स्वप्न है, सुषुप्ति है।

सृष्टि है, स्थिति है, संहार है।

भूः है, भुवः है, और स्वः है—तीन लोक हैं।

यह त्रिपुटीरूप, यह सारा त्रिक ही कहलाता है। इन त्रिकों को एक ही भाव में ठहराना, त्रिकशास्त्र कहलाता है।

के० के० नै० : एक सवाल के बारे में बात करते हुये आप ने कहा था शिव, शक्ति और नर। उनका संबन्ध आपस में क्या है?

स्वामीजी : यह शिव का प्रसर है। त्रिक जो है, यह शिव का प्रसर है। यह बाह्य प्रसर है। उतरने का क्रम है। इस क्रम का नाम है अवरोहक्रम। अवरोहक्रम में संसार है। आरोहक्रम मै मोक्ष। अवरोहक्रम जब धारण करता है शिव, फिर संसारी बन जाता है। आरोहक्रम को धारण करता है शिव, फिर मुक्त हो जाता है। जब उतरता है शिवभाव से उतरता है शक्ति के द्वारा, नर में पहुँच जाता है। नर में छटपटाता रहता है, दुःख भोगता रहता है, फिर से wind up करता है इस लीला को, इस को drama को wind up करता है फिर नरभाव से शक्तिरूप के द्वारा शिवरूप में चला जाता है। मुक्त हो जाता है।

के० के० नै० : आप ने आरोह की बात की। तो उतरने की, चढ़ने की यही लीला?

स्वामीजी : यह लीला तब सार्थक हो सकती है जब अवरोह लीला के साथ आरोह लीला सुगम रहेगी। जब उतरा लेकिन चढ़ना नहीं आयेगा वह लीला नहीं है। वह फिर संसार है। जब उतरा भी, चढ़ा भी, वह लीला है। This is the difference. This is difference between जीव and realized soul. जो ज्ञानी होता है उसको उतरना भी आता है और चढ़ना भी आता है।

के० के० नै० : इसको क्या State of freedom नाम दें?

स्वामीजी : जी। This is Shaivism.

के० के० नै० : State of freedom और लीला में थोड़ा क्रीड़ा का

स्वामीजी : यह स्वातन्त्र्य है।

के० के० नै० : यह खेलने का, खिलवाड़ का, खिलड़पन का जो स्वभाव है यह शिव का स्वभाव क्यों है?

स्वामीजी : **"स्वयं बध्नाति देवोऽयं स्वयं चैवायं उच्यते"**

अर्थात् यह शिव अपने आप को स्वयं ही बांधता है, अपने आप को स्वयं ही मुक्त करता है, वास्तव में वह न बद्ध है न मुक्त है, सदैव एक जैसा रहता है। लीला रचाता है just to bliss us. हमें अनुग्रह करने के लिये, जीवों को अनुग्रह करने के लिये यह लीला रचता है। इसीलिये शैवशास्त्र में कहा है परमेश्वर जो है वह पाँच कृत्यों को करता रहता है, जिन पांच कृत्यों में दो कृत्य अन्तर्भूत ही है।

सृष्टि करता है, स्थिति करता है, संहार करता है, पिधान करता है और अनुग्रह करता है।

उत्पन्न करता है, यह एक कृत्य है।

पालन-पोषण करता है, यह दूसरा कृत्य है,

संहार करता है, यह तीसरा कृत्य है।

निग्रह करता है, दंड देता है, वह संहार में आयेगा।

अनुग्रह करता है, वह भी संहार में आयेगा।

संहार तीन प्रकार का है -

सामान्य संहार, निग्रह रूप संहार और अनुग्रह रूप संहार।
इसमें भी तीन ही कृत्य आये।
तीन कृत्य करके भी वह अनुग्रहमय ही है।
जगत उत्पन्न करता है, जगत को अनुग्रह करनें के लिये।
जगत का पालन पोषण करता है, पालन पोषण करने का उसका अभिप्राय नहीं है, अनुग्रह करना ही उसका अभिप्राय है।
जगत का संहार करता है, जगत का निग्रह करता है केवल उसको अनुग्रह करने के लिये।
उसका तात्पर्य है just to elevate.
Elevate the whole universe.
जो उसकी अन्तरता में ठहरा हुआ है उसको elevate करना ही इस का काम है क्योंकि जीव जो है, जीवों का समूह जो है, अनन्त, अगाध, अपरिमित है, उसको अनुग्रह करता है, उसको uplift करता है, elevate करता रहता है। यह उसका काम है। इसीलिये यह लीला रचाता रहता है।

के० के० नै० : जो आरोह नहीं जानते?

स्वामीजी : उनको समझाने के लिये अवरोह लीला और आरोह लीला, यह लीला रूप बन जानी चाहिये, यह कष्टसाध्य नहीं होना चाहिये। उतरा, बस मज़े से उतरा, और चढ़ नहीं सका और फिर चिलाने लगता है कैसे मैं चढूँगा, मुझे क्या हो गया, मैं मारा गया। यह बात नहीं है। उतरना भी आना चाहिये और चढ़ना भी आना चाहिये, फिर लीलामय बन गया।

के० के० नै० : तो आरोह जानने के लिये क्या करना चाहिये?

स्वामीजी : (हंसते हंसते) गुरु के पास जाना चाहिये। दीक्षा प्राप्त करनी चाहिये, उस पर चलना चाहिये और नियमों को पालन करना चाहिये। और क्या?

के० के० नै० : नियम क्या हैं?

स्वामीजी : नियम?

नियमों को शैवशास्त्रों ने समय के नाम से अंकित किया है।

समय, आचार।

कैसे उठना।

Discipline

गुरु के पास जाना।

गुरु के पास बैठना।

गुरु के साथ बातचीत करने में, इसमें तहज़ीब होनी चाहिये। क्रम होना चाहिये। गुस्ताखी से नहीं जैसे -

"नहीं मुझे बताव"

जैसे राजा जनक ने अष्टावक्र को कहा : –

"तुम मुझे अभी मुक्त करो, दो मिनट की मोहलत देता हूँ, बस मुझे दो मिनट में मुक्त करो।"

यह नियम नहीं है। ऐसा क्रम गुरु-शिष्य क्रम में नहीं होना चाहिये।

के० के० नै० : वह तो राजा था, शिष्य नहीं था?

स्वामीजी : इसीलिये उसको शिष्य बनाना चाहता था वह अष्टावक्र उसको शिष्य बनाना चाहता था। फिर उसने कहा :–

"विषयान् विश्वतः त्यजेत्"

"अर्थात् यह सारा जो विषय है, (दो मिनट, तीन मिनट, तीन मिनट की मोहलत), यह जब छोड़ो, फिर मुक्त हो जावोगे"।

वहां यह शासन नहीं चलते हैं। नियम, प्रह्वीभाव, नम्रता होनी चाहिये।

के० के० नै० : बस एक ही नियम?

स्वामीजी : बस।

के० के० नै० : या इसके इलावा भी कोई नियम?

स्वामीजी : यही discipline में आयेगा। गुरु के पास जाकर तो गुरु के दर्शन से ही फिर नियम कायम रहते हैं। और भी नियम जो होने चाहियें वह भी बन जाते हैं, they are developed.

के० के० नै० : गुरु लोग स्वयं ही अनुग्रह करते हैं शिष्य पर या शिष्य को भी इस के लिये कुछ करना पड़ता है?

स्वामीजी : नहीं। Basis भी होने चाहियें ना।

शिष्य का मन साफ होना चाहिये।

"दुष्टाधिवास विगमे, पुष्पैर्कुम्भाधिवासिते
द्विगुणोऽस्य संस्कारो नियतं शुद्धे घटे विधिः।"

यह अभिनवगुप्त ने एक श्लोक बताया है। दुष्ट अधिवास नहीं होना चाहिये। जैसे मिट्टी का घड़ा, उसमें दुष्ट अधिवास हो, कुछ मैल भरा हुआ हो, उस में पुष्प डालने की इच्छा हो किसी को, ऐसे थोड़े ही पुष्प यदि डालते हैं उसमें, वह पुष्प भी मलिन हो जायेंगे उसमें। इसलिये उसका संस्कार, पहले वह दुष्टता हटानी है, फिर उसको साफ करना है, इसके संस्कार बनाने हैं फिर इसमें पुष्प डाले जाते हैं और फिर यह संस्कृत हो सकता है।

इसलिये दुष्ट अधिवास वाला शिष्य नहीं आना चाहिये गुरु के

पास, उस को कुछ नहीं बन सकता है। शुद्ध भाव से, प्रेम से, मन को साफ करके और हृदयरूपी स्थान को pantry बना कर नहीं आना चाहिये, हृदयरूपी स्थान बिल्कुल साफ होना चाहिये, active, ताकि उसका अनुग्रह वहां ठहर सके। आप समझ गये?

के० के० नै० : जी।

स्वामीजी : Direct experience जब होने वाली होती है वह अनुग्रह से होती है, गुरुज्ञान से प्राप्त होता है। या गुरुज्ञान या शिव-अनुग्रह से प्राप्त होता है।

दर्शनात् स्पर्शनात् वाऽपि वितताद्भवसागरात्।
तारयिष्यन्ति योगीन्द्रा कुलाचार प्रतिष्ठिताः।।

(कुलाचार का मतलब है यहाँ त्रिकाचार) त्रिकाचार में जो प्रतिष्ठित योगीन्द्र होते हैं वह दर्शन से या स्पर्श से, पार करते है अपने शिष्यों को। यहीं दीक्षा होती है उन को।

नी० क० गु० : भगवान् अभिनवगुप्त जी एकबार कहते हैं कि जिनको सत्त्वज्ञान उत्पन्न हो जाता है तो उनको देवियों की दीक्षा होती है। इसका क्या तात्पर्य है?

स्वामीजी : इसका तात्पर्य है, जो क्रम है – गुरु-शिष्य परम्परा, गुरु-शिष्य परम्परा कहीं लुप्त न हो जाये, इसके भय से उन्होंने यह कहा है जब गुरु के विना ही उसको वह ईश्वरदर्शन हो सकता है तो इसका गुरु कौन बनेगा। इसलिये अभिनवगुप्त ने वहां कहा है, "दैव्यैर्भिः" जो इन्द्रिय-शक्तियां हैं – इन्द्रियों में भी दो section शैवशास्त्रों ने रखे हैं। एक इन्द्रिय-वृत्तियाँ और दूसरा इन्द्रिय-शक्तियाँ। इन्द्रिय-वृत्तियां वह इन्द्रियां हैं आँख,

नाक, यही इन्द्रियां है, कभी यह वृत्तियों का स्वरूप धारण करती हैं और कभी शक्तियों का स्वरूप धारण करती हैं। जब वृत्तियों का स्वरूप धारण करती हैं तो फिर बहिर्मुख वृत्तियां हो जाती हैं। जब शक्तियों का स्वरूप धारण करती हैं यह वृत्तियां, वह योगियों की इन्द्रिय-शक्ति कहलाती हैं। उस समय वह इन्द्रियां वृत्तियों के रूप में न आकर शक्तियों का रूप धारण करती हैं और शक्तियां ही उस को उपदेश करती हैं। इसीलिये अभिनवगुप्त ने भगवद्गीता की टीका मे कहा है-

"तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदिश्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।।

हे अर्जुन! वह समझना चाहिये, तद्विद्धि प्राणिपातेन-प्राणिपात करने से, प्रश्न करने से और सेवा करने से, प्रणिपात नहीं है। वह केवल प्रणाम करना या परिप्रश्न पूछना (investigation) है। इन्द्रियों में जब investigate करोगे कि यह बात क्या है, मैं हूँ कौन? वह इन्द्रियां ही फिर उसको जितलायेंगी कि आप का स्वरूप क्या है। वह इन्द्रियां ही उसकी गुरु बन जाती हैं। इसलिये वहां कहा है **"देवीभिर्दीक्षिता"** इन्द्रिय-देवियों ने ही उसको दीक्षा दी है, इन्द्रिय-देवियां ही उसकी गुरु बन गई और गुरु-शिष्य क्रम उसी रीति से बदस्तूर रहा।

के० के० नै० : यह जो शैवधर्म है, इसमें भक्ति का भी कोई स्थान है?

स्वामीजी : भक्ति पर ज्यादा ज़ोर है। भक्ति न हो तो योग भी नहीं होगा। ज्ञान भी नहीं होगा। भक्ति ही होनी चाहिये पहिले।

के० के० नै० : लेकिन कहीं कुछ लोग कहते हैं कि शैवधर्म में,

भक्ति से ज्यादा समावेश जो है उसका सम्मान ज्यादा है, उसका स्थान बड़ा है। यह समावेश क्या है?

स्वामीजी : नहीं, पूर्ण समावेश ही भक्ति है।

"न पादपतनं भक्तिर्व्यापिनि परमात्मनि।
भक्तिर्भावस्वभावानां तदेकीभावभावनम्।।"

पादपतनं भक्तिः न भक्तिः। पादपतन जो है, किसी के सामने, गुरु के सामने, भगवान के सामने, प्रभु के सामने , ईश्वर के सामने झुकना भक्ति नहीं कहलाता है। ईश्वर के सामने झुक कर फिर रोना, चिल्लाना, पीटना उस के सामने, अश्रु बहाना, यह भक्ति नहीं कहलाती है। क्योंकि **"व्यापिनि परमात्मनि"** परमात्मा तो व्यापक है। हर स्थान में वह मौजूद है। तो शैवशास्त्र में भक्ति क्या है?

भक्तिर्भावस्वभावानां तदेकीभावभावनम्।

केवल ईश्वर भक्ति करने से भक्ति का सर्वथा नाश हो जाता है। सब लोगों से भक्ति करो। सब लोगों से प्रेम करो।

When you love all the worldly people, you are loving God.

यह भक्ति है।

के० के० नै० : स्वामीजी यह सब लोग तो आरोह ज़ानते नहीं। इनके लिये भक्ति पैदा करके तो आदमी फंस जायेगा, आगे कैसे जायेगा?

स्वामीजी : नहीं। यह समझने की बात है ना।

यह individual रूपता से भक्ति नहीं करनी चाहिये।

Individual रूपता से आसक्ति प्राप्त हो जायेगी।

भक्ति is universal.
यह नहीं कि एक जमात को ही प्रेम किया और दूसरी जमात को छोड़ा। Universally you should love.
You should love the universe, as the representation of God.

के० के० नै० : और ध्यान और meditation इसका भी कोई स्थान है?

स्वामीजी : हाँ, ध्यान और meditation भी करते हैं लेकिन भक्ति पहले होनी चाहिये। ध्यान तो तब ही लग जायेगा जब भक्ति होगी।

के० के० नै० : ध्यान किस का?

स्वामीजी : वही Universal जो प्रभु है।
वह देखना है हम ने कहां ठहरा है? क्योंकि वह Universal प्रभु भी त्रिक मार्ग में ही ठहरा है।
आन्तरता में है,
ग्राह्यता में है
बाह्यता में है।
प्राण जब उतरने हैं वह बाह्यता है।
प्राण जब अन्दर चले जाते हैं वह ग्राह्यता है और
प्राणापान की जो संधि है, वह अन्तरता है।
इसलिये चूंकि हम ग्राह्यता और बाह्यता में उसको पहचान नहीं सकते हैं because we are not advanced साधक, advanced aspirants,
इसलिये गुरु दीक्षा देता है, जो point है अन्तरता का, उसी पर

निरीक्षण करना, उसी पर concentrate करना। ऐसे ही ध्यान करते हैं।

म० ला० कु० : स्वामीजी, आप ने जो बताया कि सन्धि पर ही concentrate करना चाहिये, तो आम लोगों को कैसे समझायेंगे कि सन्धि क्या है?

स्वामीजी : अभ्यास में जो अशक्त है उन के लिये जप है। जप में भी जो अशक्त है उनके लिये स्तोत्र पाठ है। स्तोत्रपाठ में भी जो अशक्त है, उनके लिये universal काम करना जैसे
कुवें खोदना,
धर्मशालाएँ बनाना,
स्कूल खोलने,
Hospitals खोलने,
इस से भी मन की शुद्धि होती है।
मन की शुद्धि होने से फिर यह संधि के ज्ञान होने का अधिकार प्राप्त होता है। तत्पश्चात् उस संधि पर concentrate कर सकता है।
आम लोगों के लिये भी यह रास्ते बने हुये हैं
But you have to travel. This is a long journey, Sir.

नी० क० गु० : योगदर्शन में वैसे ज़ोर दिया है क्रिया पर, योग पर ओर वेदान्त आदि शास्त्रों में ज्ञान-प्रधानता ही मानी है। शैव-शास्त्र कैसे इनका समन्वय कर सकता है। क्या योग प्रधान है या ज्ञान प्रधान है, शैव-शास्त्र में?

स्वामीजी : यह ज्ञान-योग प्रधान है।
ज्ञान-रूप योग होना चाहिये।

योग में केवल meditation, मन्त्र जप ही नहीं करना है। इसमें ज्ञान भी होना चाहिये।

ज्ञान का योग के साथ अकाट्य संबन्ध है।

जहां ज्ञान होता है वहां योग जरूरी होना चाहिये और क्रिया भी वहां ही होनी चाहिये।

नी० क० गु० : गोया ज्ञान क्रिया के बिना अधूरा है?

स्वामीजी : ज्ञान क्रिया के बिना अधूरा है और क्रिया ज्ञान के बिना अधूरी है।

के० के० नै० : स्वामीजी यह क्रिया-योग और ज्ञान-योग की बात की गुरुटू साहिब ने और उसके बाद जो मैंने थोड़ा बहुत पढ़ा है, आणवोपाय, शाक्तोपाय और शाम्भवोपाय है, लेकिन एक है जिस में कोई उपाय नहीं है, अनुपाय। वह सीधा कोई चल सकता है या इन तीनों से चल के आना पड़ेगा, क्रिया, ज्ञान, इच्छा?

स्वामीजी : यह वास्तव में तीन ही उपाय माने गये हैं।

के० के० नै० : जी।

स्वामीजी : शाम्भवोपाय, शाक्तोपाय और आणवोपाय। शाम्भवोपाय जो हे, इच्छाशक्ति प्रधान हैं, और शाक्तोपाय ज्ञान-शक्ति प्रधान है और आणवोपाय क्रियाशक्ति प्रधान है। जहां इच्छाशक्ति से ही one-pointedness प्राप्त होती है, वहां शाम्भवोपाय काम कर सकता है। जहां one-pointedness, एकाग्रता ज्ञान से सम्भव होती है वहां शाक्तोपाय की प्रधानता होती है और जहां क्रिया से one-pointedness आती है, वहां आणवोपाय की। इसीलिये आणवोपाय के संसार में ही यह hospital खोलना,

सड़कें बनाना, कुंवें खोदना, लोगों का उपकार करना, यह बताया है। क्योंकि इस से भी मानसिक स्थिति एकाग्र बन जाती है। यह तीन उपाय-क्रम यहां Shaivism में चले आये हैं। तीन उपाय क्रमों से आगे जो अनुपाय जो क्रम आप ने बताया है, जहां कुछ नहीं करना है।

के० के० नै० : मैंने नहीं बताया है आपने बताया है। मैंने तो आप से सीखा है, मैं कैसे बता सकता हूँ?

स्वामीजी : वह अनुपाय क्रम जो है, उपेय-क्रम है, वह उपेय संसार में ही आयेगा। वह उपाय जाल में नहीं आयेगा। अनुपाय उसको कहते हैं, यह समझना कि कुछ नहीं करना। यह इतना ही उपाय, कितना उपाय?

के० के० नै० : कुछ नहीं करना?

स्वामीजी : नहीं, यही समझना। यही अच्छी तरह से, भली-भांति समझना कि कुछ नहीं करना। अच्छी तरह से। जब यह समझने लगेगा कि कुछ नहीं करना है यह अनुपाय स्थिति में आ गया। अनुपाय-स्थिति में आने वाले बहुत ही कतिपय हैं।

पूजका शतशःसन्ति, भक्ताः सन्ति सहस्रशः,
प्रसादपात्रं आश्वस्ता प्रभोर्द्वित्रा न पञ्चशः।।

अर्थात् पूजक तो सैंकड़ों हमें मिल सकते हैं। भक्ताःसन्ति सहस्रशः भक्तजन हज़ारों और करोड़ों मिल सकते हैं। परन्तु प्रसादपात्रं आश्वस्ताप्रभोः प्रभो के प्रसाद के पात्र बने जो होते हैं, द्वित्रासन्ति दो या तीन ही इस संसार में मिलेंगे, न पञ्चशः पाँच नहीं मिलेंगे। इसलिये वह अनुपाय जो है, अनुपाय in fact it is no उपाय। यह वहां लिखा है ना "अनुदराकन्या"

जैसे कोई कहता है "अनुदराकन्या" यह कन्या अनुदरा है, इसका पेट नहीं है। इसका मतलब नहीं है इसका पेट नहीं है। इसका मतलब यह है बहुत थोड़ा खाने वाली है। इसीलिये इसको अनुदराकन्या कहते हैं। इसीलिये थोड़ा सा उपाय वहां है। थोड़ा सा उपाय क्या है वहां अनुपाय में? अनुपाय में इतना उपाय है यह समझना कि कुछ नहीं करना है, बस।

के० के० नै० : लेकिन आजकल ज़माना जो है, स्वामीजी, आप जानते हैं कि दुनिया बड़ी आराम पसन्द हो गई है।

स्वामीजी : वह अनुपाय में ही रहना चाहती है?

के० के० नै० : दुनिया चाहती है कि कुछ ऐसा जादू हो कि कुछ उपाय न करना पड़े और काम बन जाये। तो अनुपाय तक आप समझते हैं कि कोई ज़रिया नहीं है उस तरह से चलना पड़ेगा जो तीन सीढ़ियां हैं उनको cross करके ही आदमी वहां पहुंच सकता है?

स्वामीजी : मेरी राय में तो इन सीढ़ियों से ही चलना पड़ेगा।

के० के० नै० : सीधा कोई नहीं जा सकता है?

स्वामीजी : सीधा है। ऊपर से जब आमन्त्रण हो, प्रभु का।

के० के० नै० : तो वह कैसे हो?

स्वामीजी : किसी-किसी को होता है ऐसे ही, काम करते-करते, प्रभु का आमन्त्रण हो गया, अनुग्रह, Grace of God, बस he is called back.

[Due to audio/speech break a few words
of the interview have been left out,
inconvenience is regretted]

के० के० नै० : यह तो आप, उर्दू में कहते हैं कशप-नफसी–अपनी बात को घटा के कहना। यह तो दुनियां जानती है, आप अपने मुंह से तो कभी नहीं कहेंगे, लेकिन यह है कि कश्मीर शैवदर्शन में, मैंने ऐसा सुना है कि जो लोग पहुंचे हुए हैं, वह जो कुछ नहीं जानते हैं, जो इस रास्ते को बिल्कुल पहचानते तक नहीं हैं, उन पर शक्तिपात करते हैं। तो क्या ऐसा हो सकता है कि आप····

स्वामीजी : हंसते, हंसते। आप ने ···· ऐसा हो सकता है।

के० के० नै० : ऐसा हो सकता है।

स्वामीजी : ऐसा हो सकता है, प्रभु की दया होनी चाहिये।

के० के० नै० : तो मैं उस समय का, उस घड़ी का बड़ी बेसबरी से इन्तज़ार करूंगा।

म० ला० कु० : ललेश्वरी, जो यहां लल्लद्यद् के नाम से बड़ी प्रसिद्ध है यहां कश्मीर की, उसने कहा है कि :

छांड़ानलूसऽस पननिस पानस छोपिज्ञानस वोत न कांह
लयकरमस वअचस मै-खानस बअर बअर बानअ तअ
चवान न कांह।

अर्थात् मैंने अपने आप को बहुत खोजा लेकिन इस निर्विकल्पज्ञान की ओर मेरी पहुंच नहीं, मैंने नहीं समझा कि निर्विकल्प ज्ञान क्या है। लेकिन जब मैंने अपने आप को लीन किया तो मैं वहां उस मैखाने पर पहुंची जहां जाम बरे बरे थे लेकिन पीने की किसी में सामर्थ्य ही नहीं थी। क्या यह अनुपाय की ओर उसने संकेत किया है।

स्वामीजी : यह अनुपाय की ओर।

म० ला० कु० : अनुपाय की ओर ही संकेत किया है?

स्वामीजी : अनुपाय की ओर संकेत किया है।

नी० क० गु० : स्वामीजी, मैं जरा विषय को बदलना चाहता हूँ। यह सांख्यदर्शन में पचीस तत्त्व माने हुए हैं। शैवशास्त्र ३७ (सैंतीस) तत्त्वों को मानता है। यह पचीस तत्त्व ले आने वाला जो है यह शैवदर्शन का तत्त्वक्रम, यह क्या है और इस में क्या रहस्य है? क्यों, उनको क्या आवश्यकता पड़ गई है २५ से बढ़कर ३७ तक जाने की?

स्वामीजी : शैवाचार्यों का यह तात्पर्य है हमें समझाना कि केवल पुरुषतत्त्व तक ही संसार खत्म नहीं है। सांख्यदर्शन में और वेदान्तदर्शन में या योगदर्शन में उन्होंने सिद्ध किया है कि पुरुषतत्त्व तक मनुष्य पहुंच गया तो मुक्त हो गया। परन्तु पुरुषतत्त्व तक पहुंचकर भी मुक्त होने की आशा नहीं है। इसको स्पष्ट करने के लिये शैवशास्त्रों ने और इसके आगे जो तत्त्व हैं, जो संसार में हैं, जो संसार को जतलाते हैं, अर्थात् पुरुषतत्त्व से आगे भी संसार है जिस को खत्म करना है, जिस को लय करना है, यह समझाने के लिये पुरुषतत्त्व से आगे, इन्होंने और पांच तत्त्व लिये हैं। पुरुष को आवृत करने वाले इन पांच तत्त्वों को पांच converings के रूप में बता दिया है और convering करने का जो instrument है, वह माया बताई है। इसलिये वह छः तत्त्व हो गये। छः तत्त्वों से जब परे पहुंचने लगता है, फिर शुद्धविद्या तत्त्व आता है। शुद्धविद्यातत्त्व में भी कुछ-कुछ शिवभाव के समझने में न्यूनता रहती है। इसलिये उस को भी संसार में ही रखा है। उससे आगे ईश्वरतत्त्व

है। ईश्वरतत्त्व में भी इदम्-भाव का कुछ-कुछ impression रहता है। इसलिये वह भी संसार है। उसके आगे सदाशिवतत्त्व में भी अहम्-भाव जो है universal consciousness भलीभांति ठहरी रहती है परन्तु वहां भी इदम्-भाव कुछ संस्कार-रूप से बना रहता है। इसलिये छत्तीस-तत्त्व रखे हैं।

के० के० नै० : शब्द है "स्पन्द" और अंग्रेज़ी में उसको कहा है vibration in consciousness. उर्दू में मैं तर्जमा तो कर सकता हूँ (शअऊरमिरताश - हल्का सा कांपना, कोई लहर आना) लेकिन वह क्या है, यह मैं नहीं जानता हूँ?

स्वामीजी : स्पन्द संसार भी हो सकता है, स्पन्द मोक्ष भी हो सकता है। स्वरूप स्थिति भी स्पन्द कहलाता है और स्पन्द जो है वह संसार भी है। जहाँ स्पन्द का तात्पर्य है "चलन" "'movement". Movement कभी-कभी आ सकती है, movement संभव ही नहीं है जब कोई भिन्नदेश, भिन्नकाल और भिन्न-आकार न हो। भिन्नदेश, भिन्नकाल और भिन्न-आकार में ही movement हो जाती है जब यह कोई चीज़ है, यह vibrate करेगी। इसके लिये space होनी चाहिये।

के० के० नै० : हाथ की उंगलियां।

स्वामीजी : हाथ की उंगलियां अगर vibrate करेंगी, स्पन्द करेंगी। इसके लिये जगह होनी चाहिये। वह जगह ही संसार है। So this is movement, which will lead you to संसार। यह भी स्पन्द कहलाता है। मगर यह जो स्पन्दशास्त्र है, हमारे शैवदर्शन में, यह ऐसा निर्णय नहीं करता है। यह वह स्पन्द है, वह चलन है, जिस में किसी भिन्न-स्थान की आवश्यकता नहीं

है। अपने में ही vibration है।

के० के० नै० : अपने में ही स्थान पैदा होता है?

स्वामीजी : स्वात्मनः, स्वात्मनि स्वात्मस्थितिः।

स्वात्मनः - अपने स्वरूप की स्थिति, अपने स्वरूप में और अपने स्वरूप से ही, अपने स्वरूप के क्रम से ही। वह स्थिति स्पन्द कहलाती है। It is vibrating in its own nature, that is स्पन्द। Vibrating force, acting in its own nature is स्पन्द।

के० के० नै० : तो महसूस होता होगा?

स्वामीजी : It is felt only.

नी० क० गु० : यह जो कहा है :-

"ऊर्मिरिषा विबोधाब्धिर्न संविदनयाविना"

इसका क्या तात्पर्य है?

स्वामीजी : यह दृष्टान्त है। बाह्य समुद्र में जो tides होती हैं, जो tides move करती हैं, वहां उनमें होना चाहिये दूसरा आकाश।

नी० क० गु० : मतलब सागर की लहरों के लिये जगह होनी चाहिये?

स्वामीजी : हाँ। सागर की लहरों का, चलने के लिये आकाश होना चाहिये। क्योंकि वह लहर जो उठेगी, कहां उठेगी, किस में जायेगी?

के० के० नै० : या ऊपर सा साहिल पर।

स्वामीजी : हां। इसलिये दूसरी जगह होनी चाहिये। द्वैत आ गया

ना वहां। मगर यह दृष्टान्त जो होता है, वह एकांगी होता है। यह जो विबोधाब्धि है, बोध सागर, चिद्रूपी जो समुद्र है, उस समुद्र में वैसी tides हैं जो स्पन्द कहलाती हैं। वह tides हैं जिसमें दूसरे स्थान की आवश्यकता नहीं है। इसीलिये कहा है **"न संविद् अनयाविना"** इस ऊर्मी के विना संविद् नहीं है। ऊर्मी ही सागर है और सागर ही ऊर्मी है।

म० ला० कु० : स्वामीजी आचार्य अभिनवगुप्त जी कहते हैं कि पृथ्वीतत्त्व में परिपूर्ण शिवभाव है और यहां तक कहा गया है कि एक मामूली घास के तिनके में भी सारे तत्त्व पाये जाते है। इस तरह उन्होंने पृथ्वीतत्त्व में ही परिपूर्ण परासंवित् को स्वीकारा है। जब यह बात है तो साधना मार्ग में तत्त्वों का जो आरोहक्रम है, यह क्यों फिर कहा गया है, इसकी क्या आवश्यकता है?

स्वामीजी : मैंने पहले ही बताया है आरोहक्रम और अवरोहक्रम, यह लीला है। इसको लीलारूप में हम ने जानना है वह जानने के लिये हम साधना करते हैं। क्योंकि जिस वक्त प्रत्यभिज्ञान होता है, जिस वक्त मनुष्य को, साधक को, योगी को, प्रत्यभिज्ञान होता है, उस समय प्रत्यभिज्ञान करने के समय, जिस समय वह अनुभव करता है अपने स्वरूप का अनुभव करता है समाधि में, उस समय उसको ऐसा अनुभव होता है कि :

ओह! यह मैं था ही, पहले से ही था।

इस अवस्था में मैं पहले से ही था। यह स्मृति इसको आ जाती है। इस स्थिति को पुष्ट करने के लिये अभिनवगुप्त जी प्रत्यभिज्ञा-शास्त्र की टीका में कहते हैं :–

स्वात्मावभासो हि न अननुभूतपूर्वः

जो स्वात्मप्रकाश है, जिस से स्वात्मा की स्थिति प्राप्त होती है, स्वात्मा का दर्शन होता है, वह अननुभूतपूर्व नहीं है। अननुभूतपूर्व हो गया - पहले नहीं देखा है, यह बात नहीं है वहां। यह पहले देख चुका है। कालान्तर में उस ने भूल डाला है। किस से? अवरोहक्रम से। जब उतर गया, भूल डाला। जब चढ़ा, यह memory आ जाती है, ओ मैं वहां ही था। I was there इसलिये यह साधनाक्रम तब तक ही है जब तक इसका प्रत्यभिज्ञान न हो जाए। प्रत्यभिज्ञान होने पर साधनाक्रम सारा खत्म हो जाता है।

म० ला० कु० : इस आम आदमी को हम कैसे समझायेंगे कि घास के तिनके में सारे तत्त्व पाये जाते हैं?

स्वामीजी : घास के तिनके में, atom को देखिये। Atom में कितनी energy है, यह scientist भी समझा सकते हैं।

के० के० नै० : Science is itself a spiritual knowledge. अब स्वामीजी एक बात और पूछने की विनती करता हूँ कि यह मोक्ष है, मोक्ष के लिये योग की आवश्यकता है कि कर्म की आवश्यकता है। या दोनों, कर्म और योग की आवश्यकता है?

स्वामीजी : कर्म क्या मतलब है आप का?

के० के० नै० : जो····जैसा हम व्यवहार, सारा व्यवहार करते हैं, सोचते, समझते हैं?

स्वामीजी : अच्छा daily routine of life?

के० के० नै० : Daily routine of life, संसारी जैसी activities?

स्वामीजी : वह neglect नहीं करनी चाहियें। यहां Shaivism मैं neglect नहीं करना है।

के० के० नै० : मोक्ष के लिये योग भी ज़रूरी है और व्यवहार भी ज़रूरी है?

स्वामीजी : व्यवहार भी ज़रूरी है।

नी० क० गु० : स्वामीजी यह जो साधना के संबन्ध में शैवशास्त्र से दूसरे शास्त्र हैं उनमें षड्दल का वर्णन आता है। लेकिन शैवशास्त्र मैं षड्दल का नहीं, यहां पर चक्रों का वर्णन आता है - षट्चक्र। तो इसका क्या तात्पर्य है। चक्रों से, दलों से क्या तात्पर्य है?

स्वामीजी : वास्तव में, मैंने भी चक्रों का ही अनुभव किया है, दलों का अनुभव नहीं किया है। दल वहां नहीं हैं। शायद शैवशास्त्र के अन्य आचार्यों ने इनको दल कह कर इसलिये समझाया है क्योंकि they are actually spokes यह दल नहीं है। यह spokes हैं wheel के। यह चक्र हैं। वहां चक्रों का उदय होता है। दलों का उदय नहीं होता है। और अभिनवगुप्त ने भी तन्त्रालोक के सातवें आह्निक के अन्त में लिखा है :-

इत्येष सूक्ष्मपरिमर्शनशीलनीय-
श्चक्रोदयोऽनुभवशास्त्रदृशा मयोक्तः।।

इस प्रकार (एष) यह (सूक्ष्मपरिमर्शनशीलनीयः) सूक्ष्म अनुभूति से अनुभव करने योग्य है यह चक्रोदय। यह जो चक्रोदय मैंने

कहा है, यह अपने अनुभव से और शास्त्रों की दृष्टि से मैंने कहा है।

के० के० नै० : स्वामीजी, आप की बात चीत शुरू होने से पहले मैं ने एक छोटी सी बात कही थी कि यह जो मेरे साथी हैं, यह आरोही हैं। यह ज्यादा जानते हैं। मेरा ज्ञान बहुत सीमित है। मैं आम आदमी की तरह हूँ। तो मेरे अन्दर जो जानने की प्यास है वह आम आदमी की प्यास है। तो थोड़ी देर पहले आप फर्मा रहे थे क्रियायोग, ज्ञानयोग, इच्छायोग, अनुपाय। एक जिसका बहुत चर्चा है, हम बहुत पढ़ते हैं इनके बारे में और लोग जानना चाहते हैं कि वह क्या है ओर उसका कश्मीर शैवदर्शन से क्या रिश्ता है - कुण्डलिनीयोग?

स्वामीजी : अच्छा, कुण्डलिनीयोग।

के० के० नै० : उसके बारे में कुछ बतायें हमें।

स्वामीजी : वास्तव में जो यह कुण्डलिनीयोग है तीन प्रकार से है शैवदर्शन के आधार पर। एक है चित्तकुण्डलिनी, दूसरी है प्राणकुण्डलिनी और तीसरी है पराकुण्डलिनी। यह शैवदृष्टि के आधार पर मैं बताता हूँ। चित्तकुण्डलिनी जो है वह कुण्डलिनी-योग में मुख्यरूपता से वर्णन की गई है। मुख्य चित्तकुण्डलिनी है। और जो पराकुण्डलिनी है वह Universal कुण्डलिनी है। और पराकुण्डलिनी के साथ हमारा कोई तालुक नहीं है, न पराकुण्डलिनी का कोई अनुभव कर सकता है। हां, चित्त-कुण्डलिनी का अनुभव कर सकता है और प्राणकुण्डलिनी का अनुभव कर सकता है। बात यह है, कि जब हम अपने मन को एकाग्र करने का प्रयत्न करने लगते हैं one-pointed

बनाते हैं, उस समय यह बात होती है कि प्राण और अपान, इस ड्रामा में मुख्य आते हैं, प्राण और अपान की गति ही इसमें प्रधान कार्य करने लगते हैं। किस में? साधना में। साधना में पूरा है काम इन्हीं का - प्राण और अपान का। चढ़ना और उतरना, चढ़ना और उतरना। यदि शाक्तोपाय दृष्टि से प्राणापान का कोई तालुक नहीं है, तो भी प्राणापान में ही परिवर्तन आ जाता है शाक्तोपाय में। ऐसे ही शाम्भवोपाय में भी प्राणापान में परिवर्तन आ जाता है। जब शाम्भवोपाय में केवल निर्विकल्प-रूपता को धारण करता है आदमी maintaining full awarencess तो फिर प्राणापान की गति change भी हो जाती है। बिल्कुल subtle रूपता से प्राणापान की गति चलती है एकाग्रता से। ऐसे ही शाक्तोपाय में भी, ऐसे ही आणवोपाय के क्रम में भी। आणवोपाय में प्राणापान तो मुख्य ही है जो handle करते हैं उस अभ्यास में। जब प्राणापान की गति सूक्ष्म होने लगती है, शाम्भवोपाय क्रम से हो, शाक्तोपाय के क्रम से हो या आणवोपाय क्रम से हो, क्या होने लगता है? यह प्राणापान रुक जाता है। प्राणापान जब रुकने लगते हैं तो साधक को यह दिखता है कि मुझे शायद अब मरना है। This is the last moment now ऐसा अनुभव होने लगता है। पर इसका जो गुरु होता है, अगर गुरु कच्चा न हो, तो फिर यह कटिबद्ध रहकर होता है वहां। डरता नहीं। वहां जो डर गया तो वह फिर व्यथित हो जाता है। बस समाधि को छोड़ता है और जगत में ही आता है। वहां डरने की बात नहीं है। और मरने का भी कोई डर नहीं है। जब यह प्राण रुकने लगते हैं तो फिर सुषुम्नाधाम में यह चले जाते हैं। सुषुम्नाधाम में central vein

है यहां। सुषुम्नाधाम में प्राणापान की गति rush हो जाती है। वह नीचे चले जाते हैं और मूलाधार स्थान पर जब touch करने लगते हैं तो एकदम fountain जैसा लगता है, fountain जैसे वह flow होता है upwards इधर skull के आगे भी।

के० के० नै० : यह फव्वारा किस चीज़ का है, रोशनी है, क्या है?

स्वामीजी : न रोशनी है, यह फव्वारा है the intensity of bliss आनन्द, चिदानन्द। चिदानन्द के रूप में ही यह फव्वारा चलता है। And this is called the state of चित्तकुण्डलिनी।

अब प्राणकुण्डलिनी के विषय में थोड़ा सा मैं निर्णय करूंगा।

के० के० नै० : जी।

स्वामीजी : प्राणकुण्डलिनी का जागरण उसको होता है जो चित्तकुण्डलिनी का अधिकारी न हो। जिसको चित्तकुण्डलिनी का जागृत न हो, उसको बहुत अभ्यास करने के बाद प्राणकुण्डलिनी जागृत होती है। जो चित्तकुण्डलिनी का अधिकारी नहीं होता है। प्राणकुण्डलिनी जब जागृत होती है फिर क्या होता है, जब इसकी गति सूक्ष्म होती है, प्राणापान की गति जब सूक्ष्म होने लगती है तो फिर यह प्राण रुक जाते हैं, रुक कर फिर चले जाते हैं उस सुषुम्नाधाम में। फिर क्या होता है? फिर मूलाधार से वही फव्वारा उठने लगता है। मगर वह फव्वारा ऐसा नहीं लगता है जैसा पहले उठा था - in a flash above the space of skull ऐसे नहीं वह फव्वारा उठता है। Bit by bit ऐसे, ऐसे with jerks । पहले मूलाधार चक्र पर आ गया। वहां मूलाधारचक्र पर जब वह touch करता

है, वहां चक्र हिलने लगता है, एक wheel हिलने लगता है। He, that साधक, experiences movement of wheel और अन्दर से उसकी आवाज़ भी सुन सकता है, योगी। उस चक्र के, हिलने की। जैसे हम पंखे के हिलने की आवाज सुन सकते हैं, ऐसे ही वह सुनता है उस चक्र के हिलने की आवाज़। फिर ऐसे ही थोड़ी देर के बाद एक दूसरा jerk होता है, फिर यह फव्वारा उठ जाता है ऊपर - filled with that bliss - God consciousness फिर दूसरा चक्र ऐसे ही घूमने लगता है। उस समय दो चक्र उसको simultaneously घूमने लगते हैं। दो चक्रों की आवाज़ वह सुनता है चलते हुये। ऐसे, ऐसे ही सब षट्चक्रों का उदय होता है। इसका नाम है प्राणकुण्डलिनी। इस प्राणकुण्डलिनी से योगियों को सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

अब इसका दूसरा रूप। इसका भी अधिकारी जो न हो, जो निकृष्ट योगी हो। निकृष्ट - मन्द योगी, छोटे सत्तर का योगी हो, उसको भी ऐसी गति होती है, जब यह प्राण rush होता है (भगवान् सभों को बचाये) नीचे चला जाता है, नीचे से वह फव्वारा नहीं उठता है। क्या होता है, फव्वारा कुछ नहीं, भ्रूमध्यचक्र movement करता है। यहां से, दो भौहों के बीच में, यह घूमने लगते हैं और नीचे वाले चक्र घूमने नहीं लगते हैं। फिर नीचे की ओर यह jerks आते हैं। मगर blissful state वहां अनुभव नहीं कर सकता है आदमी।

के० के० नै० : तो इसमें क्या होता है, कष्ट होता है?

स्वामीजी : कष्ट नहीं होता है। He enjoys यह ऐसे जैसे elec-

tric shock. Peaceful electric shock जब वह हिलने लगता है। Jerks में peaceful shock उसको अनुभव में आता है।

के० के० नै० : पहले दोनों में आरोह हैं, इसमें अवरोह है?

स्वामीजी : इसमें अवरोह करके फिर अवरोह है। अवरोह एक हो गया जब प्राणापान हो गया, नीचे चले गये। ऊपर नहीं उठते हैं। फिर यहां से फिर नीचे चले जाते हैं। यह चक्रों के रूप में। ऐसे ही चक्रों के रूप में मूलाधारचक्र भी हिलने लगता है। फलस्वरूप इसका कुछ तात्पर्य नहीं निकलता है बल्कि इससे आगे जाकर उसको समाधि का अभाव ही रहता है जन्मभर।

के० के० नै० : इसका फायदा क्या है?

स्वामीजी : कुछ नहीं। इसका फायदा नहीं होता है।

के० के० नै० : तो जब हम आम लोगों को बतायें कि जो स्वातन्त्र्य सिद्धान्त है काश्मीर शैवदर्शन का, अहम सिद्धान्त, उसके बारे में उनके कुछ शक शुबात अगर हो तो वह भी आप दूर करें आज?

स्वामीजी : स्वातन्त्र्य है ऊपर से नीचे उतरना। ऊपर से नीचे उतरा, कैसे उतरा? स्वातन्त्र्य से।

निजशक्तिवैभवभरात् अण्डचतुष्टयं इदं विभागेन।
शक्तिर्मायाप्रकृतिपृथ्वीचेति प्रभावितं प्रभुना।।

जो प्रभु है, भगवान् शिव है, शङ्कर है, कृष्ण है या कोई भी, [भगवान् तो एक ही है], उसने [निजशक्तिवैभवभरात्] अपनी जो स्वातन्त्र्यशक्ति है, उसके वैभव, जो उसका विभव है, उसका

expansion, उस expansion से उसने जगत को रचाया है।

के० के० नै० : इच्छाशक्ति?

स्वामीजी : नहीं। स्वातन्त्र्य शक्ति से जगत की रचना की है। किस जगत की? [शक्तिर्मायाप्रकृतिपृथ्वीचेति प्रभावितं प्रभुना] शक्ति-अण्ड, माया-अण्ड, प्रकृति-अण्ड और पृथ्वी-अण्ड। पृथ्वी-अण्ड में पृथ्वी-तत्त्व हैं। छत्तीस-तत्त्वों में से पृथ्वी-अण्ड में पृथ्वी-तत्त्व का अन्तर्भाव है और जल-तत्त्व से लेकर प्रकृति-तत्त्व, प्रकृति-अण्ड में इन तत्त्वों का अन्तर्भाव है। और पुरुष-तत्त्व से लेकर माया-तत्त्व तक, माया-अण्ड में अन्तर्भाव है। और शक्ति-अण्ड में शुद्धविद्या, ईश्वर, सदाशिव और शक्ति-तत्त्व का अन्तर्भाव है। और उस स्वातन्त्र्य को सिद्ध करने के लिये इस स्वातन्त्र्य का होना चाहिये। लीला वही हुई जो उतर भी सके और उतर कर चढ़ भी सके।

के० के० नै० : यह बहुत से जो धर्म हैं उनमें एक बात यह कही जाती, थोड़ी देर पहले कुकिलू साहब बात कर रहे थे कि यह जो हमारी आम ज़िन्दगी है उसके कर्म जो हैं इसमें अच्छे होंगे तो अच्छा फल मिलेगा, बुरे होंगे बुरा फल मिलेगा। और धर्मों में डर की भावना, अच्छे कर्म करोगे तो स्वर्ग में जावोगे, बुरे कर्म करोगे तो नरक में जावोगे। तो जितनी देर से मैं आप से बात सुन रहा हूँ, आप ने एक बार भी मुझे नहीं डराया। तो क्या यह बतायें कि Kashmir Shaivism जो है इसमें डर का कोई स्थान है या नहीं है?

स्वामीजी : नहीं, डर नहीं है, यह लीला है।

के० के० नै० : तो इसमें किसी को कोई, यह स्वर्ग और नरक

वाला जो चक्र है....?

स्वामीजी : नहीं, स्वर्ग नरक नहीं,

स्वयं बध्नाति देवेशः स्वयंचैवविमुच्यते।
स्वयं भोक्ता स्वयं ज्ञाता चैवोपलक्ष्यते।।

यह लीला समझना। यह सारी लीला है। As long as it is fact that our Creator is Lord Shiva, हम तो उसकी creation हैं। Lord Shiva ने हमें पैदा किया है। He is our father. How can he destroy us तो यह belief कभी नहीं होना चाहिये, पुत्र अपने पिता से कभी डरता है क्या?

के० के० नै० : बहुत से धर्म हैं अपने देश में बल्कि दुनिया में, यह कहते हैं कि मुक्ति का रास्ता अगर चाहिये तो भोग का रास्ता छोड़ो। शैव-धर्म कहता है कि भुक्ति और मुक्ति साथ-साथ चल सकते हैं। तो अगर भोग को छोड़ सके आदमी तो फिर एक बन्धन टूट जाता है। तो आप यह बतायें कि यह बन्धन टूट जाता है। तो आप यह बतायें कि यह बन्धन को पहने-पहने मुक्ति कैसे हो सकती है?

स्वामीजी : बन्धन जो है ना वह curiosity है।

स्वामीजी : नहीं, बन्धन जो हैं, जीव को जो बांधने का साधन है वह भोग की curiosity है। वह भोग नहीं है। Itself भोग नहीं है बन्धन। भोग से बन्धन नहीं होता है। Curiosity से बन्धन रहता हैं।

के० के० नै० : Curiosity का मतलब अज्ञान?

स्वामीजी : नहीं। Curiosity मैं कभी समझाऊँगा आपको। Curiosity का मतलब यह है, मैंने भोग-साधन का एकदम एक

बार ही त्याग किया। अपने आप से कहां बस चलो, यह बस गंदा व्यवहार है, इसको छोड़ो। Curiosity lead करती है। मानसिक-स्थिति में इसकी curiosity बनी रहती है। किस की curiosity "कि किस-किस भोग को मैंने छोड़ा है"? फलतः उसने उसको पकड़ा है। इसीलिये अभिनवगुप्त ने भगवद्गीता के दूसरे अध्याय के अन्त में यह सिद्धान्त हमारे सामने रखा है :-

अहो नु चेतसश्चित्रा गतिस्त्यागेन यत्किल।
आरोहत्येव विषयाञ्छ्रेयंस्तांस्तु परित्यजेत्।।

[अहो नु चेतसश्चित्रा गतिः] अरे भाइया! सुनो मन की गति जो है वह बहुत ही आश्चर्यमय गति है। बहुत ही कठिन समझने योग्य है मन की गति। [त्यागेन यत्किल] भोगों को जिस ने त्याग किया [आरोहत्येव विषयान्] उसके ऊपर सारे भोग आ गये। Curiosity बनी रहती है। [छ्रेयंस्तांस्तु] जो भोगों में फंस गया [परित्यजेत्] वह मुक्त हो गया। उसको एक तिनका भी इसका चाव नहीं रहता। बिल्कुल उसको नफरत हो जाती है इन भोगों की। इसलिये उसने छोड़े। इस सिद्धान्त को प्रधान Shaivism ने माना है - नहीं, त्यागने से कुछ फायदा नहीं है। त्यागने से राग आ जायेगा और पकड़ने से त्याग आ जायेगा। रखो ऐसे ही। So in which way we are placed by our Master, by our Creator बस go on like that. This is the right way.

के० के० नै० : शैव-धर्म में ही दक्षिण में भोग को छोड़ने की बात है, तो वह भी तो शैवधर्म का एक रूप है?

स्वामीजी : वह त्रिक-शास्त्र नहीं है। त्रिक-शास्त्र में वह वर्णन नहीं किया है।

के० के० नै० : लेकिन शैव-धर्म ही तो है?

स्वामीजी : हां शैव-धर्म है—पाशुपत-मत। पाशुपतमत उसको माना गया है। वह पाशुपतमत है।

के० के० नै० : तो उसका और इसका फर्क क्या है। आम आदमी के लिये?

स्वामीजी : वह द्वैत-शास्त्र है। जहां तक अद्वैत का ताल्लुक है, अद्वैतशास्त्र का संप्रदाय केवल त्रिकशास्त्र में ही देखेंगे, और कहीं नहीं।

के० के० नै० : महान् लेखक राहुल सांकृत्यायन की observation है, पता नहीं कहां तक सही है या नहीं, कि Shaivism जो है दरअसल पहले जो बौद्धधर्म था उसी का एक रूप है। बुद्ध को हटा के शिव को रख दिया। ऐसा उन्होंने observe किया है। आप की इसके बारे में क्या राय है?

स्वामीजी : कोई हानि भी नहीं हो सकती है यह मानने में। बुद्ध की जो है वह भी शिव ही है क्योंकि मैं ने पहले ही आप से निवेदन किया है कि जो भी संसार में है वह शिव का ही स्वरूप है। एक स्वरूप से, या दूसरे स्वरूप से, शिव ही शिव है।

के० के० नै० : इसी बात को ले, स्वामीजी, तो यह हम लोग जो मारे-मारे फिरते हैं, कभी इस तीर्थ पर, कभी उस तीर्थ पर, कभी इनके दर्शन, कभी उनके दर्शन, जब सभी जगह यही

कुछ है तो कहीं आने-जाने की क्या ज़रूरत है?

स्वामीजी : कहीं आने-जाने की कोई ज़रूरत नहीं है, सिर्फ अपने मन को साफ करके रखिये और वहां बस उससे आलिंगन कीजिए जो चिदानन्दस्वरूप, भगवान शङ्कर है, आप के हृदय में जो वास करते हैं।

के० के० नै० : यह जो थोड़ी सी आप ने छोटी सी शर्त रखी है दो तीन शब्दों में, यह बड़ी मुश्किल है। यह बताइये मन को साफ कैसे करें?

स्वामीजी : परेशानियां, ऐसी सारी बातें छोड़ दीजिये। These things are not recognized by Shaivism. नानकजी भी कहते हैं —: **"नानक रबसंभाल सबगल अच्छी"**

अरे नानक! उस रब को संभालो, फिर जो करोगें, वह ठीक ही ठीक है।

के० के० नै० : स्वामीजी प्रश्न तो जो कुछ हमारे मन में उठे थे हम ने आप से पूछे। सभी सवाल और जो जवाब हमें मिले, उनसे तसल्ली हुई। और सुनने वालों को भी उससे फायदा हुआ होगा। लेकिन सवाल से फिर सवाल और जवाब से फिर सवाल पैदा होते हैं, तो यह सिलसिला तो चलता है।

जो इस ख्याल से भी कि आपको हम ज्यादा थकायें नहीं, आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। आपने बहुत कृपा की हम पर।

स्वामीजी : भगवान की दया से।

।। जय गुरुदेव।।

BOOKS PUBLISHED BY ISHWAR ASHRAM TRUST

FOUNDED BY SHRI. ISHWAR SWAROOP SWAMI LAKSHMANJOO MAHARAJ

Author Swami Lakshmanjoo

ENGLISH

- Lectures on Practice and Discipline in Kashmir Shaivism
- Kashmir Shaivism (The Secret Supreme)
- Siva Sutras
- Self Realization in Kashmir Shaivism
- Sri Vatulanatha Sutrani
- Kundalini Vijnana Rahaysam
- Abhinavagupta's Bodhapancadashika (with 1 Audio CD)
- Bhagavadgita Abhinavagupta's Sangraha Shlokas (with 1 Audio CD)
- Kshemaraja's Parapraveshika (with 2 Audio CDS)

HINDI/SANSKRIT

- Abhinavagupta's Srimad Bhagavadgita (Sanskrit)
- Samba Pancashika
- Pancastavi with Hindi translation
- Kramanayapradipika
- Shivastotravali
- Snan Sandyopasana Vidhi with Gurugita manuscript in Sanskrit
- Stuti Candrika
- Amriteshwar Bhairav Mahimnastotram
- Kashmir Shaiva Darshan
- Yam & Niyam (Sanskrit/Hindi)
- Trik Shastra Rahasya Prakriya (manuscript with Hindi translation)
- Tantraloka (First Ahnika) manuscript with Hindi translation